International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 6, June - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

गांधी अर्थनीति और प्रेमचन्द

प्रो0 शिशर कुमार पाण्डेय

शोध सारांश:

गांधी जी का आर्थिक चिन्तन समाज के अन्तिम छोर पर खड़े व्यक्तियों के चिन्तन पर केन्द्रित है। गांधी जी की अर्थ संरचना का स्वरूप दार्शनिक समनता पर आधारित है जिसे उन्होंने व्यवहारिक घरातल पर उतारने का प्रयास किया। समाज की आर्थिक समानता के मसीहा के रूप में उनका नाम भारत ही नहीं, अतिप सम्पूर्ण विश्व में प्रतिष्ठित है। प्रेमचन्द के साहित्य में आर्थिक शोषण और प्रत्रड़नाओं से संघर्ष करते व्यक्तियों की मानवतावादी अर्थनीति संरचना मिलती है। प्रस्तुत शोध में गांधी जी और प्रेमचन्द के आर्थिक चिन्तन, भौतिक जीवन की मानवीय और वैज्ञानिक व्याख्या, एवं आर्थिक क्रान्ति का अध्ययन किया गया है।

मुख्य शब्द: अर्थ-नीति, सामाजिक, समग्रता, आदर्शमूलक, स्वावलम्बी, मानवीय, कर्मभमि।

प्रस्तावना:

20 मार्च 1980 से 1980 तक प्रेमचन्द जन्म - शताब्दी के उपलक्ष्य में विश्व - शान्ति - परिषद के सहयोग से अखिल भारतीय शान्ति और एक जुटता संगठन द्वारा प्रेमचन्द के रचनात्मिक व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओंपर एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन हुआ था जिसमें "इथियोपिया" केसप्रसिद्ध लेखक टी0 बेगूशेफा ने प्रेमचन्द की अर्थ - नीति के मानवीय पक्ष पर विचार व्यक्त करते हुये कहाः प्रेमचन्द के साहित्य में नये इन्सान की पहचान है। "युनेस्को प्रतिनिधि बी0 शैली पूतोन ने कहाः "आज जब विश्व नयी आर्थिक व्यवस्था की तलाश में है तो प्रेमचन्द की प्रासंगिकता और भी बंद जाती है। ... आज समस्त मानवता के सामने समस्या है भूख उत्पीड़न एवं अभाव से मुक्ति पाने की। प्रेमचन्द ने अपने साहित्य में इन समस्याओं को स्वर देकर उसे कालातीत बना दिया है।[1]

गांधी जी की अर्थनीति के विवेचन - संदर्भ में उक्त प्रकार के उद्धरणों की प्रासंगिकता इसलिये है कि प्रेमचन्द की रचनाओं में अर्थिक बहरुपियों की भीड़ से "नये इन्सान" की तलाश करे अथवा महात्मा गांधी की रचनाधर्मी अर्थनीति का ही परिणाम है। जिस प्रकार "लेनिन" को अपनी आर्थिक नीतियों की धारदार व्याख्या और उसके व्यापक प्रचार - प्रसार के लिये "गोकी" की जरुरत थी उसी प्रकार महात्मा गांधी को प्रेमचन्द की आवश्यकता थी।

यह कहने की जरुरत नहीं है कि न महात्मा गांधी और न प्रेमचन्द ही अर्थशास्त्री थे। इन दोनों के अर्थ-दर्षन का मूल भूत सिद्धान्त था, आर्थिक शोषण और उत्पीड़न की प्रतारणाओं से दम तोड़ने समाज की मुक्ति और एक नयी मानवता - वादी अर्थनीति की संरचना। यह कहना ज्यादा सही होगा कि महात्मा गांधी अर्थ-सिद्धान्ती नहीं ये बल्कि वे अर्थ-नीतिज्ञ अथवा अर्थ - दार्शनिक थे। उन्होनें आर्थिक विषमता से कराहते - तड़पते लोगों के लिये जो संवेदन शील योजनाएँ बनाई उनमें मूत्यवादी देष का गौरवपूर्ण अतीत, समसामयिक वर्तमान की समग्र अपेक्षाएं और आने वाली पीढी - प्रति-पीढी के लिये सुनहरे आर्थिक जीवन की सारी धड़कने एकाकार हो गयी है। इस परिकल्पनावादी आर्थिक योजनाओं के दर्शन में गांधी जी कहीं भी अमूर्त नहीं हुए है, कहीं भी उन्होने आर्थिक यथार्थ की अवहेलना नहीं की है। और नहीं आर्थिक कल्पनाओं की भूल-भूलैया तैयार की है। वे समाज की आर्थिक समानता के मसीहा थे-पूरी तरह दृढ निभ्रान्त और तथ्य वादी। प्रेमचन्द की रचनाओं में भी समाज की आर्थिक समता की यही पमभ्रता मूर्त हुई है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 6, June - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

आर्थिक चिन्तन का केन्द्र - मनुष्य

गांधी जी के आर्थिक चिन्तन का प्रथम और अन्तिम केन्द्र मनुष्य है। वे समाज के आखिरी आदमी का भी समग्र विकास करना चाहते थे। सही अर्थो में तो वे मानवीय कल्याण के ही अर्थशास्त्री थे। उन्होने मनुष्य की शरीर - शक्ति , प्रकृति - शक्ति और समाज - शक्ति की जाँच परताल की और इन शाक्तियों का मूल्यांकन आध्यात्मिकता और आर्थिकता, दोनो परिप्रेक्ष्य में किया। गांधी जी की अर्थनीति की सबसे बड़ी विशेषता रही है कि उन्होनें अर्थ के साथ नीति और भौतिक उपभोग के साथ आध्यत्मिक आनन्द का सामंजस्य किया। इसलिए वे अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र के बीच विभाजन रेखा नहीं खीचना चाहते थे। वे जिस अभिनव और समग्र जीवन का आर्थिक दर्शन रचने में समर्थ हुए हैं वह न वायवीय है और न भ्रान्तिमूलक। आज का विश्व इस सत्य की अनुभूति और ज्यादा तीखे रुप में कर रहा है। गांधी ने बार - बार कहा हैः सच्चा अर्थशास्त्र न्याय का अर्थशास्त्र है। लोग जितना न्याय करना और सदाव्रती बनना सीखेंगे उतना ही सुखीय होगे। येन-केन प्रकारेण लोगों को धनवान बनाना सिखाना उनकी अत्यधिक कुसेवा करना है।[2]"जो अर्थशास्त्र धन की पूजा करना सिखाना है और कमजोरों को हानि पहुचाकर सबलों को दौलत जमा करने देता है, वह झूठा और भयानक अर्थशास्त्र है। वह मृत्यु का दूत है। सच्चा अर्थशास्त्र सामाजिक न्याय का पक्षकार होता है। वह सबकी जिनमें दुर्बल से दुर्बल भी शामिल हैं - समाज रुप से भलाई चाहता है और सभ्य जीवन की अनिवार्यता सृजित करता है।[3]"

गांधी जी कहा करते थे कि किसी राष्ट्र की सम्पत्ति मनुष्य होता है न कि सोना - चाँदी।" सम्पत्ति की वास्तविक धमिनयां नीली हैं और वे पत्थरों में नहीं बल्कि मांस में है। सम्पत्ति मात्र की सिद्धि इसी में है कि अधिक से अधिक सशक्त, तेजस्वी आँखों वाले और प्रसन्न हृदय मनुष्य पैदा किये जाये''। [4]

गांधी जी की ही तरह प्रेमचन्द जी भी अपने साहित्य का केन्द्र मनुष्य को ही मानते थे, कोई वायवीय और कल्पना निर्मित मनुष्य नहीं बल्कि धरती की मिट्टी और धूल में जीवन का महत् पक्ष तलाश करने वाले मनुष्य को ही उन्होने "मनुष्य" होने की मान्यता दी। उनका विश्वास था कि अच्छे तथा श्रमशील मनुष्यों ेस ही अच्छे समाज की संरचना की जा सकती है। प्रेमचन्द घोषित रुप से उद्देश्य परक लेखक हैं। वे मानते थे कि यदि रचना का उद्देश्य महत् हो, मनुष्य की नियति से जुड़ा हुआ हो, एक नए आदमी और समाज के निर्माण में समर्थ हो तो ऐसा साहित्य किसी भी दशा में गैर जिम्मेदार नहीं हो सकता।

समग्रता और सन्तुलन

गांधी जी की अर्थनीति में सन्तुलनवादी भावात्मक सत्ता को अत्यधिक महत्व दिया गया है। वे किसी रचनाधर्मी कृतिकार की ही तरह भूमि, वनस्पति और मानवेतर प्राणी से भी सन्तुलन बनाये रखने के पक्षवर थे। बिना इस विराट् सचेतन सन्तुलन के अर्थिक सोद्देश्यता की पूर्ति असंभव मानते थे। मानवेतर सृष्टि के दुरुपयोग अथवा अनिष्ट को वे अहितकर मानते थे। प्रकृति और पदार्थ का ऐसा उपभोग चाहते थे जिससे उनकी समृद्धि में तीव्रता आए न कि क्षणिता। "समय, शक्ति, जीवन, प्रकृति, पशु और वनस्पति, सबका उचित और सन्तुलित प्रयोग ही गांधी जी की अर्थनीति है।[5]"

गांधी जी ने भौतिक जीवन की मानवीय और वैज्ञानिक व्याख्या की है उन्होने सभी प्रकार के अभावों, दुरुपयोगों अथवा अति प्रयोगों को कुंठित करने वाली विद्या को अर्थनीति कहा है। समाज की वे क्रियाएं, जो कठित करने वाली विद्या को अर्थनीति कहा है। समाज की वे क्रियाएं, जो अन्तिम व्यक्ति को भी उन्नयन करने तथा सम्पदा का उचित उपभोग करने का समान अवसर प्रदान करती हैं, अर्थनीति की मूलभूत आधार हैं। वे भौतिक विशेषतः आर्थिक उन्नति के लिये धार्मिक मूल्यों और नैतिक आदर्शो का परिपालन अनिवार्य मानते

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 6, June - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

है। उनके अनुसार केवल आर्थिक नीतियां ही मानवीय जीवन की समग्रता नहीं हो सकती। व्यक्ति और समाज की समग्रोन्मुख संरचना तभी हो सकती है जब राजनीति, समाजनीति और अर्थनीति के शरीर में उदात्त एवं आध्यात्मिक आचारों के प्राण स्पन्दित होते रहेगें। अर्थशास्त्र एक ऐसा जीवन विज्ञान हे जिसमें त्याग, प्रेम, सहानभूति और परोपकार की भावना मूर्त होती है, भौतिकता और अध्यात्मिकता का अटूट समन्वय होता है और "तेन त्यवतेन भुंजीथाः मागृधः कस्यस्विद्धनम्'' का भाव मुखरित हेाता है। बिना इन गुणों के अर्थशास्त्र होता है।

गांधी जी चाहते थे कि प्रत्येक व्यक्ति का जीवन स्वावलम्बी और प्रतिष्ठा दायक हो, प्रत्येक की भोगेच्छा मर्यादित और स्वास्थ्यदायी रहे, प्रत्येक उत्पादक बन कर उपभोक्ता बने, उत्पादन का मूलमंत्र शरीर-श्रम रहे, तभी अर्थनीति का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। मानवीय लक्ष्य और सामाजिक कार्यक्रम के बिना अर्थनीति अधूरी है। साधन और साध्य में पवित्रता और एक रुपता के बिना अर्थनीति अकल्याणकारी है। सुख की समग्रता का अर्थ ही है, मानव - मात्र का चरम कल्याण। इस समग्रता की प्राप्ति जीवन की सादगी और विचारों की उच्चता द्वारा ही सम्भंव है। उन्होने सामाजिक समग्रता पर प्रकाश डालते हुए कहरा था:'' ''मनुष्य न केवल बुद्धि है, न केवल शरीर न केवल हृदय या आत्मा। तीनों के एक समाल विलास में ही मनुष्यत्व सिद्ध होगा इसमें ही अर्थशास्त्र मूर्त होगा।[6]

प्रेमचन्द भी सामाजिक समग्रता के पक्षधर थे। इस पक्षधरता के कारण ही वे नग्न यथार्थवादी साहित्य को परिलक्ष्य नहीं मानते थे। उनके साहित्य की अन्तिम परिणति आदर्शमूलक समाज की परिकल्पना थी। उन्होने अपने आदर्श के विषय में लिखा: मेरा आदर्श समा जवह है जिसमें सबको समान रुप से अवसर मिले। विकास को छोड़ कर और किस जरिए से हम मंजिल पर पहुँच सकते हैं। लोगों का चरित्र ही निर्णायक तत्व है। कोई समाज - व्यवस्था नहीं पनप सकती जबतक हम क्रमशः उन्नत न हो।''[7] सादा जीवन के बारे में अपनी पत्नी शिवरानी जी को समझाते हुए कहा था:'' यहाँ वालों को बहुत सादे ढंग से गुजर करना चाहिए। हम लोगों को अपने से छोटों को देखना है। उनको देखों और उनसे मिलने की कोशिष करों।''[8]

इस प्रकार गांधी जी अर्थनीति में जीवन की समग्रता लाना चाहते थे जिसके लिए सन्तुलित सामाजिक आचरणों की पीठिका बना रहे थे। उन्होनें स्वयं अपने ही जीवन में सन्तुलन का प्रयोग किया था जो नुक्तः कामयाब रहा। इसी कामयाबी के प्रतीक प्रेमचन्द भी थे। उनका सारा साहित्य ही इसका विश्वसनीय साक्ष्य है। हालांकि इतना मानकर चला जा सकता है कि तद् युगीन परिस्थियों ने इन दोनों महापुरुषों की मानसिक रचना एक ही मिट्टी और थापी से की थी इसलिए यह कहना न्याय-संगत होगा कि गांधी जी की आर्थिक विचार धाराओं का प्रभाव प्रेमचन्द पर पड़ा था।

गांधी जी की आर्थिक - क्रान्ति

माहात्मा गांधी आर्थिक क्रान्ति के युग-प्रवर्तक ऐसे मनीषी हैं जिनकी तुलना विश्व के किसी भी क्रान्ति - दृष्टासेनही की जा सकती। इनकी आर्थिक क्रान्ति का प्रथम सोपान है भारत वर्ष के गाँव । वे किसानों के यंत्र - हल और भंगियों के यंत्र झाड़ू से एक अभिनव आर्थिक क्रान्ति का प्रवर्तन करना चाहते थे। वे आर्थिक क्रान्ति के लिये शारीरिक श्रम को प्रथम साधन के रुप में प्रयुक्त करते रहे। शरीर - श्रम का कलात्मक विकास करना उनका लक्ष्य था। इसलिये उन्होनें श्रम को सबसे बड़ा सामाजिक व्रत माना था। लोक-मंगल की कामना से स्वेच्छया श्रम को आनन्द की परिणति कहा करते थे। गांधी जी की आर्थिक क्रान्ति का लक्ष्य था-एक रस समाज की संरचना करके उसमें सर्व-धर्म-समंन्वय का आमोदमय विचार उत्पन्न करना। ऐसे ही समाज में वर्ग-भेद को तिलांजल दी सकती है, शोषण-प्रवृत्ति का उन्मूलन हो सकता है, सम्पूर्ण समाज प्रेम और सहानुभूति के आमोदमयी गन्ध से आपूरति हो सकता है, श्रम की कलात्मकता का रसास्वादन किया जा सकता है और आध्यत्मिक सांस्कृतिक जीवनादशों का नव-निर्माण किया जा सकता है।

गांधी जी ने देश की परम्परागत विरासत की वकालत करते हुए कहा थाः भारत अपने मूल

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 6, June - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

स्वरुप में कर्मभूमि है, भोग-भूमि नहीं, इसलिये आर्थिक क्रान्ति के लिये उन्होने हिंसा के स्थान पर हृदय-परिवर्तन पर जोर दिया। वे मार्क्स के इस विश्वास को अमनोवैाानिक और अनैतिहासिक मानते थे कि आर्थिक शाक्तिां ही धर्म, नीति, दर्शन और साहित्य के मूल में होती है। इसीलिये मार्क्स के रक्तमूल आर्थिक क्रान्ति में उनका विश्वास नहीं था। वे समाज के समग्र और आमूल परिवर्तन को ही क्रान्ति की संज्ञा देते थे। गुणात्मक शाक्तियों के विकास का सततीकरण ही क्रान्ति की अभिप्रेरक है। व्यक्ति - व्यक्ति के दृष्टि कोण में परिवर्तन, दैनिक जीवन में उनका सक्रिय प्रयोग और इस प्रकार समतावादी समाज की पुर्नप्रतिष्ठा द्वारा ही क्रान्ति के परिणाम के स्थायित्व की कल्पना की जा सकती है। क्रान्ति का अहिंसक स्वरुप तो बौद्धिक अथवा आध्यात्मिक शाक्ति तक का हनन नहीं करता। क्रान्ति के लिये साम्यवादी देशों की ‘‘ ब्रेन वाशिंग‘‘ की पद्धित को वे नितान्त अमानवीय और अवैज्ञानिक मानते थे। उनका कहना था कि स्वतः स्फूर्त विवेक के अभाव में आर्थिक क्रान्ति न संभव है और न फलप्रद। खूनी क्रान्ति द्वारा समाज में नये रुप के आर्थिक मनुष्यों की बाढ़ मूल्यों के कगार को तो ले डूबेगी, लेकिन शोषण के तटबन्धों से सिर धुनते - धनते क्षीण पड़ जायेगी फलतः शोषण दुगने वेग से पल्लवित होगा।

क्रान्ति सम्बन्धी गांधी की ही बातों के दुहराते हुए विनोगा भावे ले लिखा है लोग समझते हैं कि क्रान्ति रक्ता-पात के बिना हो ही नहीं सकती। ऐसे लोग सचमुच क्रान्तिकारी हैं ही नहीं। उनके सामने ध्येय क्रान्ति का नहीं बल्कि वर्तमान सुखी और दुखी लोगों के स्थानों की अदला-बदली करने का है। इसीलिए में इसे जैसे - थे वाद‘ कहता हूं। क्रान्ति का अर्थ तो यह है कि निरपवाद रुप में सर्वत्र सुख ही सुख हो। यह तभी संभव होगा जब हृदय परिवर्तन के सिद्धान्त के प्रति हमारी श्रद्धा हो। मुझे जरा सभी सन्देह नहीं है कि अगर अहिंसात्मक क्रान्ति भारत में नहीं हुई तो वह और कहीं नहीं हो सकती।‘‘[9]

क्रान्ति - चिन्तन को एक नया परिप्रेक्ष्य देने के लिये गांधी जी हमेशा सोचा करते थे कि पत्थर से देने में, अत्याचार का प्रतिकार अत्याचार से करने में, सुन के बदले ख़ून बहाने में कौन सी क्रान्ति है,। क्रान्ति है दुश्मन को गले लगाने में, क्रान्ति है अत्याचारी को क्षमा करने में, क्रान्ति है गिरे हुए को ऊपर उठाने में। और इस क्रान्ति का साधन है-हृदय - परिवर्तन, जीवन - शुद्धि, साधन की पावनता और प्रेम का अधिकतम विस्तार।

प्रेमचन्द की क्रान्ति-मूलक धारणा गांधी की ही भांति विधायक साधनों में ही विश्वास करती है। उनकी कथाओं के कमोवेशा सभी चरित्र हृदय-परिवर्तन और सामाजिक क्रान्ति के लिए साधनों की शुद्धता को ही महत्व देने वाले हैं। डॉ0 इन्द्रनाथ मदान के नाम अपने एक पत्र में प्रेमचन्द ने क्रान्ति की अवधारणा और उसके परिणाम पर विचार व्यक्त करते हुये लिखा था ‘‘मैं सामाजिक विकास में विश्वास रखता हूॅ, हमारा उद्देश्य जनमत को शिक्षित करना है। क्रान्ति क्रान्ति ज्यादा समझादार उपायों की असफलता का नाम है। मेरा आदर्श समाज वह है जिसमें सबको समान अवसर मिले। कहना संदेहास्पद है कि क्रान्ति से हम कहां पहुचेगें। यह हो सकता है कि हम उसके जरिए और भी बुरी डिक्टेटरशिप पर पहुंचे जिसमें रचनामात्र व्यक्ति - स्वाधीनता न हो। मैं रंग-ढंग सब बदल देना चाहता हूॅ पर ध्वंस नहीं करना चाहता। अगर मुझमें पूर्ण ज्ञान की शाक्ति होती और मैं समझता कि ध्वंस के जरिए हम स्वर्ग-लोक में पहुँच जायेगें तो मैं ध्वंस करने में भी आगा - पीछा न करता।‘‘[10]

जाहिर है कि डॉ0 इन्द्रनाथ मादान के प्रश्नों का उत्तर देते हुये प्रेमचन्द ने यह पत्र बोल्शाविक क्रान्ति के ढंग और परिणाम को देख लेने के बाद लिखा था। इसमें साफ झलकता है कि ध्वंस द्वारा सामाजिक आर्थिक निर्माण की कल्पना पानी पर लकीर खींचने की तरह है। आखिरी वाक्य का व्यंग्य इस धारणा की ओर भी अधिक प्रतीति दिलाले वाला है।

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 9 Issue 6, June - 2019
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

उपसंहार:-

जिस प्रकार गांधी जी के लिये कहा गया है ‘‘गांधी जी उन क्रान्तिकारियों में नहीं थे जिनकी प्रवृत्ति केवल संहार की ओर होती है, बल्कि वे उस कोटि के क्रान्तिकारी थे जिसकी प्रवृत्तियां रचनात्मक होती है।’’ उसी प्रकार प्रेमचन्द के व्यक्ति और साहित्य के लिये भी कहा जाना उचित होगा। अतः स्पष्ट है कि प्रेमचन्द गांधी जी की अर्थनीति के मूलभूत सभी सिद्धान्तों को चरितार्थ करने और उन्हेंं व्यावहारिक रूप देने में हिन्दी - साहित्य के अकेले रचनाकार रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. प्रेमचन्द विशेषांक - उत्तर प्रदेश, जुलाई 1980, पृ0 123-27।
2. गांधी जीज़ फराफ्रेज आफ अन्टू दिस लास्ट, पृ0 53।
3. हरिजन, 3 अक्टूबर, 1937।
4. गांधीजीज पैराफ्रेज आफ अन्टू दिस लास्ट, पृ0 4।
5. दूधनाथ चतुर्वेदी, महात्मा गांधी का आर्थिक दर्शन, पृ0 24।
6. हरिजन, 8 मई 1937
7. सं0 मदनगोपाल: चिट्ठी पत्री, पृ0 237 25 दिसम्बर 1934।
8. शिवरानी देवी: प्रेमचन्द धर में, पृ0 89।
9. हरिजन, 15 दिसम्बर 1951।
10. चिट्ठी पत्री, भाग 2, पृ0 237 26 दिसम्बर 1937।

पूर्व संकायाध्यक्ष

राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान (मानित वि0वि0)

विशाल खंड 4, गोमती नगर, लखनऊ, (उ0प्र0) - 226010